International Journal of Advanced Multidisciplinary Research in Social Sciences and Humanities
ISSN: 0000-0000
A Peer-Reviewed, Open Access, Multidisciplinary Academic Journal
https://ijamrssh.org/
Volume-1, Issue-1 2026, Page No. 10-14 Received: 14-06-2026, Accepted: 170-06-2026, Published: 06-07-2025

इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यास में प्रतिबिंबित कामकाजी महिलाएँ एवं उनकी कार्यक्षेत्रीय उपलब्धियाँ

फरहत नूरी

हिंदी विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,अलीगढ़

Abstract

यह अध्ययन इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में कामकाजी महिलाओं के बदलते स्वरूप, उनकी सामाजिक पहचान तथा सशक्तिकरण की प्रक्रिया का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वैश्वीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी, शिक्षा और आर्थिक उदारीकरण ने महिलाओं के जीवन, कार्यक्षेत्र तथा सामाजिक भूमिका में व्यापक परिवर्तन किए हैं। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि आधुनिक हिंदी उपन्यासों में महिला पात्र पारंपरिक घरेलू भूमिकाओं से आगे बढ़कर शिक्षा, चिकित्सा, प्रशासन, न्यायपालिका, पत्रकारिता, राजनीति, कॉर्पोरेट क्षेत्र, उद्यमिता, खेल तथा अन्य पेशेवर क्षेत्रों में अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित करती दिखाई देती हैं। साथ ही, इन उपन्यासों में महिलाओं के आत्मबोध, संघर्ष, स्वावलंबन, अधिकार चेतना और सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध प्रतिरोध को प्रभावी रूप से चित्रित किया गया है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि इक्कीसवीं सदी का हिंदी उपन्यास कामकाजी महिला को केवल परिवार की सदस्य के रूप में नहीं, बल्कि स्वतंत्र, आत्मनिर्भर, निर्णयक्षम और परिवर्तनकारी सामाजिक शक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है।

Keywords : इक्कीसवीं सदी, हिंदी उपन्यास, कामकाजी महिला, महिला सशक्तिकरण, स्त्री अस्मिता, आत्मनिर्भरता, वैश्वीकरण, महिला चेतना

इक्कीसवीं सदी अपने विविध परिवर्तनों एवं उपलब्धियों की दृष्टि से समाज और साहित्य दोनों ही परिप्रेक्ष्य में काफी महत्वपूर्ण है। इक्कीसवीं सदी ज्ञान, तकनीक, वैश्वीकरण और सूचना क्रांति का समय माना जाता है तथा इस सदी में इंटरनेट, सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता वैश्वीकरण व बाजार वाद ने समूचे मानव जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। इक्कीसवीं सदी में न केवल मानव जीवन बल्कि समाज, संस्कृति, राजनीति व आर्थिक परिस्थितियां भी काफी प्रभावित हैं। साथ ही इस सदी में मानव जीवन, सामाजिक संबंध व जीवन मूल्य में भी स्पष्ट रूप से परिवर्तनशीलता आयी। इक्कीसवीं सदी की इस परिवर्तित रूप से साहित्य भी अछूता नहीं रहा क्योंकि साहित्य ने सदैव ही समाज व जनता की परिवर्तित चित्त वृत्तियों को प्रतिबिंबित करने का दायित्व निभाया है। साहित्यिक दृष्टिकोण से आकलन करें तो इस सदी के उपन्यास में बदलते सामाजिक संबंध, सांस्कृतिक विघटन, उपभोक्ता वाद, तकनीकी प्रभाव एवं मानवीय संवेदनाओं जैसे विषय को प्रमुखता से दर्ज किया गया। सरल भाषा में बात करें तो, "इक्कीसवीं शती के प्रथम दशक-पर्यंत यही स्थितियां मुख्यतः साहित्य का विषय रही हैं। परिवर्तित समाज में व्यक्ति की जीवन-पद्धति, मूल्य-दृष्टि, रिश्तों नातों में जो बदलाव आया, साहित्य का उससे गहरा संबंध रहा है|"[1] इक्कीसवीं के इन्हीं प्रासंगिक विषयों के अंतर्गत महिलाओं की परिवर्तन शाली, भूमिका एवं पहचान भी समसामयिक मुद्दा बनता जा रहा है।

इक्कीसवीं सदी को अगर हम महिला सशक्तिकरण की सदी कहें तो कुछ अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि इस सदी में देश की आधी आबादी ने पितृसत्तात्मक व्यवस्था द्वारा बनाए गए बेड़ियों को तोड़कर स्वयं को विविध भूमिका एवं व्यक्तित्व में ढालने का काम किया है। इस आधी आबादी ने अपने भीतर अपनी अस्मिता को लेकर चिंताएं प्रकट की और अपने 'स्व' को लेकर सशंकित दिखी| इस सदी में महिला ने स्वयं को ढूँढना व टटोलना शुरू किया कि वह कहाँ है? उसके जीवन का अर्थ क्या है? क्या वह केवल माँ, पत्नी, बेटी ही मात्र है जो सदैव ही पुरुष की सेविका, बच्चों की पालनहार या पिता की लाडली बनकर दूसरों को प्रसन्न करती रहे? या फिर उसके अतिरिक्त भी उसके जीवन की कोई सार्थकता है| क्या परिवार से इतर भी उसका कोई व्यक्ति है? समाज में उसकी कोई पहचान है और नहीं है तो क्यों? इन ज्वलंत सवालों से आधुनिक युग की महिला टकराती है और अस्तित्व का आत्मबोध करती है। अस्मिता बोध के इन सवालों ने महिला चेतना को झकझोरने एवं जागृत करने

का काम किया। इसलिए आज की महिला न केवल अपने होने की अर्थ को तलाशने में जुटी अपितु हर उस कारण की खोज करने में लग गयी जिन कारणों से समाज में उसके अस्तित्व को दोयम स्थान पर रखा गया| अस्तित्व से जुड़े तमाम सवालों में आर्थिक रूप से उपयोगी होना ही सर्वप्रथम कारण जान पड़ा| अतः यही कारण है कि महिलाएँ अपने लिए बनाए गये सीमा रेखा को लांघकर अपने होने के अर्थ को स्थापित करने में जुटी हुई हैं| वर्तमान समय में महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनना अपने जीवन का ध्येय बना लिया है और इसी उद्देश्य के चलते वह कामकाज की ओर अधिक से अधिक आकृष्ट हो रही हैं, बल्कि कह सकते हैं कि समाज में अपनी विविध भूमिका एवं उपलब्धियों से जानी जा रही हैं। इक्कीसवीं सदी में महिला सशक्तीकरण ने महिलाओं में इस प्रकार आत्मविश्वास स्फुरित किया है कि अब वह अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए पुरुषों की पात्रता नहीं रह गयी, बल्कि अधिकारपूर्वक छीन लेने में ज्यादा विश्वास करने लगी।

अब महिलाएं जैविक आधार पर न तो द्वितीय श्रेणी में रखी जाने वाली रह गयीं और न ही हाशिए पर। इस संदर्भ में कमला भसीन का कहना है कि, "महिलाओं का सशक्तिकरण सतत और गतिशील दोनों तरह की प्रक्रिया है और यह महिलाओं को पराधीन रखने वाली ढांचे और विचारधाराओं को बदलने की महिलाओं की योग्यता में वृद्धि करती है। यह प्रक्रिया उन्हें संसाधनों और निर्णय लेने की प्रक्रिया तक ज्यादा पहुँच और निर्णय कायम करने, अपने जीवन पर ज्यादा नियंत्रण प्राप्त करके और ज़्यादा स्वायत्तता प्राप्त करने में सक्षम बनाती है।"[2] इक्कीसवीं सदी में नई तकनीक ज्ञान-विज्ञान और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विकास और परिवर्तन की जो हवा चली उसका प्रभाव महिलाओं पर भी पड़ा, साथ ही महिला मुक्ति आंदोलनों का पर्याप्त असर भी उनकी सोचने समझने की क्षमता में परिवर्तन आया, जिससे महिलाओं को घर की चारदीवारी से मुक्त होने का अनुकूल वातावरण सुलभ हुआ। महिलाओं को विभिन्न क्षेत्रों में प्रवेश दिलाने में भूमंडलीकरण व बाजार वादी व्यवस्था का भी महत्वपूर्ण हस्तक्षेप है। बाजार वादी व्यवस्था में सस्ते श्रम को काफी महत्व दिया गया, जिस कारण कामकाज के प्रति व्यापक स्तर पर महिलाओं की मांग बढ़ी। फलस्वरूप एक ओर महिलाओं के श्रम को आधार मिला तो वहीं दूसरी और उन्हें नए- नए क्षेत्रों में कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। भूमंडलीकरण द्वारा उपलब्ध कराये गए अवसर महिलाओं के लिए मील का पत्थर साबित हुआ। आर्थिक मजबूती मिलने से महिला न केवल अर्थ की दृष्टि सशक्त हुई बल्कि उसके भीतर नए प्रकार का स्वाभिमान भी जगा। महिला शिक्षा व उसकी कौशल क्षमता को देखते हुए महिला के प्रति कामकाज को लेकर समाज और परिवार की दृष्टिकोण में भी बदलाव आया है। और उसी बदलाव का ही नतीजा है कि आज महिलाएँ उच्च शिक्षा प्राप्त कर प्रबंधन संस्थानों, बैंकिंग सेक्टर, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, ऑटोमोबाइल, खेल जगत तथा अनुसंधान जैसे क्षेत्रों में पदासीन होकर सफलता का परचम लहरा रही है। उपन्यास के संदर्भ में कामकाजी महिला के विकसित हो रहे स्वरूप पर संक्षिप्त रूप से दृष्टि डालें तो यह पता चलता है कि आरंभिक उपन्यासों में किस प्रकार से शिक्षित महिलाओं के कामकाजी बनने की प्रक्रिया को अंकित किया जाने लगा, जैसे 1869 ई. में लिखा गया उपन्यास 'मिरातुल उरूस' {डिप्टी नज़ीर अहमद} में असगरी नामक शिक्षित महिला के माध्यम से मिलता है। असगरी पढ़ी-लिखी समझदार महिला है और उसके शिक्षित होने का मूल्य समाज में दिखता है। इसी कारण आसपास के संपन्न घरानों की यह इच्छा होती है कि असगरी उनके घर की लड़कियों को शिक्षा देने का कार्य करे| अतः एक संपन्न परिवार द्वारा उनकी लड़कियों को पढ़ाने का प्रस्ताव असगरी को दिया जाता है, "अगर उस्तानी गिरी की नौकरी करें तो उनको लिवा लाओ, खाना कपड़ा और दस रुपए महीना, पान ज़र्दे का खर्च हम देने को तैयार हैं।"[3] आगे चलकर 1870 ई. में लिखित उपन्यास 'देवरानी जेठानी की कहानी' में भी शिक्षित और अशिक्षित महिलाओं के बीच काम का अंतर दिखलाया गया है। अशिक्षित महिला जेठानी जो केवल घरेलू कार्य खाना बनाना, घर की साफ-सफाई, पीसना-खोटना इत्यादि कार्य तक ही सीमित है किंतु वहीं उसकी देवरानी जो पढ़ी-लिखी बुद्धिमान महिला है।

अतः उसके कार्यों में क्या अंतर है इस बात का उल्लेख इन पंक्तियों के माध्यम से मिलता है, "पीसना-खोटना, चर्खापूनी ऐसी मेहनत के काम देवरानी से नहीं हो सके थे। इसलिए कि उसने बाप के घर किये नहीं थे| परंतु वह उस से दस गुने अच्छे काम कलाबत्तू और गोटी किनारे के जाने थी। पीसने-खोटने में क्या रखा है| घड़ी भर पीसा दो पैसे का हुआ, वह आठ आने का काम रोज़ का कढ़ावत का काम कर लेती थी।"[4] वस्तुतः ये उपन्यास महिलाओं के उस समय की स्थिति को ब्यान करते हैं, जब महिला शिक्षा का कोई ऐसा प्रारूप नहीं था जो उन्हें बाहरी क्षेत्रों के कार्यों अथवा नौकरीपेशा के लिए मान्य था और न ही संपन्न घरों की महिलाओं का घर से इतर बाहर निकलकर कार्य करना समाज को स्वीकार था। उन्नीसवीं शताब्दी के दशकों दौर में महिला मुक्ति आंदोलन व महिला शिक्षा का मुद्दा अपने उरूज पर था। इस समय में महिला शिक्षा को लेकर अनेक समाज सुधारकों द्वारा आवाज उठाया गया कि महिलाओं को भी शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अधिकार मिलना चाहिए। स्वयं महिलाएँ भी अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुईं और एकजुट होकर उन्होंने समाज के समक्ष ऐसी मांग रखी कि उन्हें भी ऐसी शिक्षा दी जाए जो उन्हें नौकरीपेशा के योग्य बनाए व व्यक्ति होने के मौलिक अधिकारों की पृष्ठभूमि पर स्थापित करे। इस तरह के सामाजिक मुद्दों और आंदोलनों का क्रांतिकारी नतीजा यह निकला कि उन्नीसवीं सदी में महिला शिक्षा का ऐसा प्रारूप तैयार किया गया जो धार्मिक शिक्षा से इतर था अर्थात ऐसी शिक्षा जो महिला को कामकाज की धरातल पर समर्थन बनाए। तत्पश्चात उन्नीसवीं सदी में महिलाओं के लिए नये तर्ज़ पर स्कूल खोला जाने लगा तथा पाठ्यक्रम में आधुनिक ढंग को ध्यान में रखते हुए ज्ञान, विज्ञान व हस्तशिल्प की शिक्षाएं शामिल की गई।

इस सामाजिक परिवर्तन का असर महिलाओं में पर्याप्त रूप से दिखने लगा क्योंकि उन्नीसवीं सदी में अनेक ऐसे क्षेत्रों का द्वार महिलाओं के लिए खुलने लगा था| जिसके फलस्वरूप महिलाएँ शिक्षिका, डॉक्टर, राजनेत्री इत्यादि के रूप में समाज के समक्ष अपनी पहचान दर्ज कराने लगीं। महिला के इस परिवर्तित छवि की अभिव्यक्ति बीसवीं सदी के उपन्यास में दिखाई दिए। इस समय के उपन्यासों में शिक्षित महिला चरित्र को केंद्र में रखकर उनकी पहचान व योग्यता को व्याख्यायित किया जाने लगा। जिसका उदाहरण हमें 'गोदान' {मुंशी प्रेमचंद} में मालती के चरित्र में मिलता है, "आप इंग्लैंड से डॉक्टरी पढ़

आयी हैं और अब प्रैक्टिस करती हैं। ताल्लुकेदारों के महलों में उनका बहुत प्रवेश है। आप नवयुग की साक्षात प्रतिमा हैं| गात कोमल, पर चपलता, कूट-कूट कर भरी हुई है| झिझक या संकोच का कहीं नाम नहीं, मेकअप में प्रवीण, बला की हाजिर-जवाब, पुरुष मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, आमोद-प्रमोद को जीवन का तत्व समझने वाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण| जहाँ आत्मा का स्थान है, वहाँ प्रदर्शन जहाँ हृदय का है वहाँ हावभाव, मनोद्गारों पर कठोर निग्रही जिसमें इच्छा या अभिलाषा का सा हो गया है।"[5] यहाँ पर मालती के माध्यम से महिला का ऐसा स्वरूप खड़ा किया गया जो पूर्णतः आधुनिक विदेश से शिक्षा प्राप्त ऐसी महिला का प्रतिनिधित्व करती जो अपने नव युगीन व्यक्तित्व के बल पर ताल्लुकेदारों में पहचानी की जाती है। वह निर्भीक और निःसंकोची प्रवृत्ति की महिला है। अतः मालती अपने अधिकार और समर्थता के प्रति से जागरूक है। फिर 1953 में रचित उपन्यास 'सुखदा' {जैनेंद्र} में ऐसी महिला के व्यक्तित्व का परिचय मिलता है जो अंग्रेजी में शिक्षा प्राप्त है, विवाह के पश्चात वह घर में गृहणी का जीवन व्यतीत कर रही है। परंतु सुखदा को ऐसे जीवन से संतुष्ट नहीं है। उसके भीतर अपने व्यक्तित्व व अधिकार के प्रति चेतना जगती है और उसे घर में रहना निर्थक जान पड़ने लगता है| वह ऐसा प्रतीत करने लगती है कि महिला को घर की परिधि में बंद कर पराधीन बना दिया गया है और उसकी उन्नति के सारे दरवाजे बंद कर दिए जाते हैं। सुखदा अपने होने के अर्थ को सार्थक बनाने के लिए गृहणी जीवन से मुक्ति प्राप्त कर आत्मनिर्भर बनकर परिवार व स्वयं के लिए उपयोगी बनना चाहती है| वह अपनी माँ से अपनी इच्छा को व्यक्त करती है, "मैंने कहा सोचती हूँ मैं काम करने लगूं, माँ ने संशय और विस्मय से कहा तूं काम करने लगे! तूं क्या काम करने लगे? मैंने कहा कुछ भी जो मिल जाय| इतनी तो नौकरियां हैं| घर की आमदनी बढ़ जाएगी तो अच्छा ही है।"[6] कामकाजी महिलाओं की संख्या में भारी वृद्धि स्वतंत्रता के पश्चात आये संकट के दौरान हुई जब देश के लोग अनेक प्रकार के संकटों से जूझ रहे थे। इस मुश्किल समय से पार पाने के लिए भारी संख्या में महिलाएँ भी कामकाज के लिए भरसक प्रयास करने लगीं| इस दौरान कामकाजी महिलाओं का एक ऐसा वर्ग उभरा जिसे 'मध्य वर्ग' के नाम से अभिहित किया गया। इस समय महिलाएँ आर्थिक संकट से त्राण पाने के लिए अनेक प्रकार के कार्यों की ओर आकृष्ट हुईं जो इससे पहले समाज व परिवार द्वारा उनके लिए स्वीकार्य नहीं था, क्योंकि इससे पहले महिलाओं के कामकाज के पीछे 'सम्मानजनक कार्य' की उपाधि लगा दी गयी थी। वस्तुतः स्वतंत्रता के पश्चात महिलाएँ टाइपिस्ट, कलर्क, टेलीफोन ऑपरेटर व अखबार के दफ्तरों जैसे पुरुष बाहुल्य क्षेत्रों में कार्य करने की ओर आकृष्ट हुईं।

महिलाओं के लिए इस प्रकार के काम को स्वीकार करने में समाज व परिवार को थोड़ा समय लगा। इस प्रकार की दृष्टि का उल्लेख उपन्यास 'झूठा सच' {यशपाल} में मिलता है, जब कनक ने अखबार के दफ्तर में काम करने की रुचि दिखाती है। कनक को ऐसे क्षेत्र में कम करने से रोकने के लिए के कशिश नामी पात्र के द्वारा इस प्रकार के सामाजिक दृष्टिकोण का पता चलता है, "तुम मेरी भी बेटी ही हो| सच कहता हूँ पुरुषों के दफ्तर, शरीफज़ादियों के लिए मुनासिब जगह नहीं है.... सब जवान मर्दों में एक लड़की का बैठना क्या उचित होगा इन दफ्तरों में बहुत लूज टॉक, इंडिसेंट जोक्स चलते हैं। नॉट फिट फॉर ए रिस्पेक टेबल गर्ल मेरी तो सलाह है, तुम किसी गर्ल्स स्कूल में या स्त्रियों में दूसरा सामाजिक काम करो।"[7] बींसवीं सदी के उपन्यास में अधिकतर महिलायोचित समझे जाने वाले कार्यों के अनुकूल ही कामकाजी महिला पात्रों की अभिव्यक्ति हुई है- डॉक्टर, अध्यापिका, नर्स, स्टेनो आदि रूप में| केवल कुछ ही उपन्यास में ऐसी महिलाओं का चित्रण किया गया जो पुरुषयोचित समझे जाने वाले क्षेकार्यत्रों व व्यवसायों में कार्यरत हैं। 'अंधेरे बंद कमरे' {मोहन राकेश} में पत्रकार सुषमा 'चिड़ियाघर' {गिरिराज किशोर} की अधिकारी मिसेज रिजवी 'काली आंधी' {कमलेश्वर} की राजनेता मालती 'अकेला पलाश' {मेहरुन्निसा} की अधिकारी तहमीना 'अपनी-अपनी यात्रा' {कुसुम अंसल} की ऐडवोकेट सुरेखा| इससे यह स्पष्ट होता है कि बीसवीं सदी में कामकाजी महिलाओं के कामकाज के व्यापक क्षेत्र की ओर उपन्यास कारों की दृष्टि संकुचित ही रही। कामकाजी महिलाओं के लिए इक्कीसवीं सदी उनके उत्थान की सदी मानी जाती है। इस सदी में कोई भी ऐसा क्षेत्र अथवा कार्य महिला की पहुँच से दूर नहीं रह गया जहाँ उनके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति या पहचान न मिलती हो। इस सदी की महिलाएँ, "अब केवल शिक्षिका, डॉक्टर या नर्स ही नहीं हैं, बल्कि वे तकनीकी विशेषज्ञ, वकील, इंजीनियर, वैज्ञानिक, पत्रकार, उद्यमी, पायलट, सेना अधिकारी आदि की भूमिकाओं में अपनी पहचान बना रही हैं। इलेक्ट्रॉनिक और कंप्यूटर की दुनिया में भी अपनी शक्ति पहचान रही हैं; राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय कंपनियों में बड़े-बड़े पदों पर बैठ रही हैं।"[8]

महिलाओं की इस व्यापक पहचान की व्याख्या इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में व्यापक रूप से किया गया| इस सदी के उपन्यास कारों ने महिलाओं की कार्य क्षेत्रीय व्यापकता को काफी विस्तृत ढंग से पात्रों के माध्यम से चित्रित किया है। इस सदी की कामकाजी महिलाएँ पहले की अपेक्षा काफी परिवर्तित व संघर्षशील दिखाई दे रही हैं। अब वह सीधी-सादी सुशील दिखने वाली आवरण से बाहर निकलती हुई आधुनिक रीति-रिवाज व तौर-तरीकों से सुसज्जित महिलाएँ हैं जो पढ़ाने की नई-नई पद्धतियों की प्रयोगधर्मी हैं| वह अंतर्राष्ट्रीय स्कॉलरशिप प्राप्त कर डिग्री धारक हैं। इक्कीसवीं सदी में महिला शिक्षिका के लिए ये बहुत बड़ा परिवर्तन और उपाधि के रूप में है। इस संदर्भ में देख सकते हैं कि उपन्यास 'और सिर्फ तितली' की महिला शिक्षिका तान्या दिल्ली के सोफिया इंटरनेशनल स्कूल की टीचर है, "ग्रुप की लीडर तान्या ही थी। वह सोचती थी| क्रिएटिव थी| पढ़ाने के नए तौर-तरीकों को बताती थी। बाद में उसकी नकल पूरे विंग में हर टीचर करता था।"[9] तान्या दिल्ली विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने के अतिरिक्त ब्रिटिश टीचिंग इन्स्टिट्यूट ऑफ लंदन से स्कॉलरशिप पर टीचिंग डिप्लोमा होल्डर थी। दूसरी शिक्षिका, "अमृता ने लंदन में पढ़ा चुकी थी। मोंटेसरी पद्धति की पढ़ाई का उन्हें अच्छा अनुभव था लंदन के ऐजवेयर एरिया में स्थित सेंट मारिया में इन्होंने करीब आठ साल तक पढ़ाया था।"[10] आज के समय में महिला विद्यालय अध्यापिका से इतर विश्वविद्यालय स्तर पर प्रोफेसर के पद पर भी आसीन है। उपन्यास के संदर्भ में देख सकते हैं, "ललिता चतुर्वेदी दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं।"[11]

वर्तमान समय की महिलाएँ स्कूल विश्वविद्यालय की अतिरिक्त ऑनलाइन शिक्षण संस्थानों में बतौर प्रशिक्षिका के तौर पर भी अपनी पहचान बना रही हैं। जैसे, "सुधा मैडम वो यू.पी.एस.सी. की कोचिंग देती थी और देश भर में उनका प्रतिष्ठित नाक था।"[12] सुधा मैडम ड्रीम अकैडमी नाम से ऑनलाइन कोचिंग सेंटर चलाती थी जहाँ हज़ारों विद्यार्थी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी करते थे। चिकित्सा व स्वास्थ्य के क्षेत्र में बात करें तो इस क्षेत्र भी महिलाएँ अपनी विशेष योग्यता से पहचानी जा रही हैं। इस सदी के उपन्यास में महिला डॉक्टरों को केंद्र में रखकर अनेक पात्रों का वर्णन मिलता है। जैसे 'विज़न' उपन्यास में महानगर के पॉश अस्पतालों के चमकते कॉरिडोर, जेम्स और एप्रन पहने तथा गले में स्टेथोस्कोप लटकाए महिला डॉक्टरों का चित्रण मिलता है। उपन्यास की पात्र, "डॉक्टर नेहा शरण एक नेत्र विशेषज्ञ है।"[13] इसी संदर्भ में अन्य महिला डॉक्टर, "डॉक्टर आभा द्विवेदी नेत्र विशेषज्ञ और सर्जन हैं|"[14] ये महिलाएँ चिकित्सा के बहुमूल्य सूत्रों की ज्ञाता और फेको विधि की विशेष शल्य चिकित्सक हैं| स्त्री रोग विशेषग की जानकार, "डॉक्टर गीता चक्रवर्ती गायनोकोलॉजी की असिस्टेंट प्रोफेसर हैं।"[15]

डॉक्टर के रूप में एक और पात्र विद्या का परिचय मिलता है जो ऐसे समाज व क्षेत्र में पढ़-लिख कर प्रथम महिला डॉक्टर बनी कि जहाँ लड़कियाँ तो दूर इतनी शिक्षा लड़को को भी नहीं मिली। ऐसे क्षेत्र में जन्मी विद्या शिक्षित होकर अपनी सबसे अलग पहचान बनाती है, "वह अब डॉक्टर थी।"[16] विद्या अपनी इस पहचान से न केवल अपने गाँव के लोगों के लिए बल्कि पूरे इलाके के लिए प्रेरणा व कौतूहल दोनों ही है। उपन्यास 'नकटौरा' में "रेखा कपूर मुंबई के एस. एन. डी. टी. महिला विश्वविद्यालय से क्लिनिकल साइकोलॉजी से एम.ए. कर मुंबई के थाणे जिले के पागलखाने में.... नौकरी करते हुए पागलों की जटिल मानसिक रुग्णता और उनकी दिमागी अस्थिरता के कुपरिणामों के संदर्भ में उनसे बातचीत उन कारणों की तह तक जाने का प्रयास किया जो उनकी इस बिगड़ी दिमागी हालत के जिम्मेदार थे।"[17] राजनीति और प्रशासनिक क्षेत्र की ओर दृष्टि डालें तो वर्तमान समय में महिलाओं की भागीदारी राजनीति प्रशासनिक कार्यों में भी अधिक संख्या में सुदृढ़ हुई है। आज की महिलाएँ आई.ए.एस., आई.पी.एस. व आइ.आर.एस. जैसे प्रतिष्ठित सेवाओं में ख्याति अर्जित कर रही हैं। विकास योजना, नीति निर्माण, निर्णय प्रक्रिया व उनके क्रियान्वयन में महिलाएँ सक्रियता से भागीदारी बन रही हैं। महिलाओं के इस रूप का प्रतिबिंब उपन्यास की इन पात्रों के माध्यम से देखने को मिलता है| जैसे उपन्यास 'आधी दुनिया पूरा आसमान' में किरण, "यू.पी.एस.सी. की परीक्षा प्रथम स्थान पर पास कर आई.ए.एस. बनती है।"[18]

इसी प्रकार उपन्यास 'गुनाह-बेगुनाह' की पात्र इला चौधरी पुलिसकर्मी है| इला हरियाणा क्षेत्र के ऐसी जगह से है जहाँ लड़िकयों की जन्म के बाद ही हत्या कर दी जाती या फिर अल्पायु में ही विवाह कर दिया जाता था केवल इस डर से कि लड़की बालिग होकर किसी लड़के के प्रेम में न फंस जाए जिससे कारण समाज में परिवार का अपमान हो। और ऐसे समाज में इला सबसे अलग हटकर सोचती है| वह समाज और परिवार से टक्कर लेती हुई शादी के मंडप से भागकर अपनी स्वतंत्रता को प्राथमिकता देती है और पुलिसकर्मी के रूप में अपना करियर बनाकर अपनी पहचान स्थापित करती है| इला अपने व्यक्तित्व के बल पर लड़कियों के प्रति बनाई गयी दृष्टिकोण को बदलने में भी सहायक होती है। इसी तरह से समीना अपने धर्म और परिवार की पुरानी रीतियों को तोडती हुई अपनी रुचि अनुसार करियर चुनती है। वह विवाह के पश्चात पुलिस के क्षेत्र अपने करियर को आगे बढ़ाना चाहती है, "शादी हुई मगर समीना गृहस्थी के बंधन में नहीं बंधी| उसका सेलेक्शन हुआ। ट्रेनिंग के लिए रवाना हुई।"[19] शादी के बाद समीना पत्नी या अपने पति के नाम से नहीं पहचानी गयी बल्कि वह अपने व्यक्तित्व से जानी गयी। उपन्यास में ऐसी महिला पात्र भी अंकित की गयीं जो वकालत के क्षेत्र में कार्यरत हैं जैसे उपन्यास 'बित्ता भर की छोकरी' में, "माया रे एक सफल बैरिस्टर के रूप में चित्रित हैं।"[20]

उपन्यास 'नकटौरा' में, "एडवोकेट रंजना गुप्ता मानी जानी वकील हैं।"[21] रंजना गुप्ता दिल्ली सुप्रीम कोर्ट के नामी एडवोकेट प्रमोद दीक्षित की सहायिका के रूप में प्रैक्टिस कर रही है। इस सदी के उपन्यास में ऐसी अनेक महिला पात्र हैं जो राजनीति में सक्रियता से अपनी भूमिका निभा रही हैं। इस संदर्भ में उपन्यास 'बित्ता भर की छोकरी' की पात्र इंदिरा विशेष रूप से उल्लेखित है, जब राजनीति में उस का आगमन होता है जिससे न केवल महिलाओं की राजनैतिक हैसियत सुनिश्चित हुई बल्कि आगे के लिए भी राजनीति उनके करियर का ग्राफ ऊँचाई तक पहुँचा| इंदिरा का राजनीति में प्रवेश से देश के इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ा। इन पंक्तियों के माध्यम से आकलन कर सकते हैं कि जब इंदिरा ने, "भारत के इतिहास में सात सौ बरस रजिया सुल्तान के बाद.... 1966 में भारत की पहली महिला प्रधानमंत्री बनकर हिंदुस्तान की बागडोर अपने हाथ में ली।"[22] इसी श्रृंखला में सरोजिनी नायडू उत्तर प्रदेश की प्रथम महिला गवर्नर के रूप में पहचानी गई। उपन्यास 'ये आम रास्ता नहीं' में अनेक ऐसी महिला चित्रित हैं जो राजनीति की दुनिया में अपनी ओहदा से जानी जाती हैं। 'ये आम रास्ता नहीं' में अनेक ऐसी महिलाएँ चित्रित हैं जो राजनीति की दुनिया में जानी पहचानी जाती हैं| जैसे राजनेती रत्नाजी, "मैडम अपने ज़माने में आप सबसे खूबसूरत और तेजतर्रार नेता के रूप में जानी जाती थीं|....आपका नाम राजनीतिक गलियारे में आज भी अदब के साथ लिया जाता है।"[23] मीडिया एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में भी महिलाएँ भारी संख्या में अपनी कौशल दिखा रही हैं और अपनी प्रतिभा का लोहा मनवा रही हैं। इक्कीसवीं सदी के उपन्यास में अनेक महिला पात्रों का वर्णन किया गया है जो मीडिया एवं पत्रकारिता दोनों ही क्षेत्रों में सशक्त रूप से अपना हुनर दिखा रही हैं। जैसे देख सकते हैं उपन्यास 'नकटौरा' में बिट्टू, "इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में आगे बढ़ रही है|"[24] तथा उपन्यास 'आईनासाज़' की मेघना नहीं दुनिया नामक अखबार के दफ्तर में कार्यरत है। इसी प्रकार "हेमांगिनी रानाडे आकाशवाणी में महिलाओं के लिए विशेष कार्यक्रम तैयार करती थी।"[25] कला एवं व्यवसाय के क्षेत्र में बात करें तो कला एवं व्यवसाय में महिलाओं ने अपनी विशेष प्रतिभा का परिचय दिया है। नृत्य, संगीत, चित्रकला, लोक कला अथवा हस्तशिल्प इत्यादि किसी भी कार्य क्षेत्र में महिलाएँ अपनी योग्यता दिखा रही हैं।

आधुनिक चित्रकला, रंगमंच, सिनेमा व फैशन डिज़ाइनिंग में महिलाएँ अपनी छाप छोड़ने से कतई पीछे नहीं हैं। कला एवं फैशन से संबंधित महिला पात्र जैसे उपन्यास 'आईनासाज़' में महिमा ने, "एस.एफ.आई. ज्वॉइन किया था और माँ-बाबा की प्रेरणा से शास्त्रीय संगीत भी सीखा था।"[26] अन्य पात्र सपना मॉडलिंग में अपनी पहचान बनाना चाहती थी। इसी प्रकार से शहाना अंतर्राष्ट्रीय चित्रकार के रूप में ख्याति अर्जित कर रही है। "शहाना को एक अंतरराष्ट्रीय सम्मान मिला है और उसके बनाए चित्रों के प्रदर्शन त्रिवेणी में जल्द ही आयोजित होगी।"[27] इसी प्रकार से कॉरपोरेट्स, जगत, उद्यमिता, स्टार्टअप व डिजिटल बिज़नेस इत्यादि में भी आज की महिला पात्रों का वर्णन मिलता है। जैसे उपन्यास 'मुन्नी मोबाइल' में "अस्मिता दिल्ली में कॉल सेंटर में टीम लीडर है|"[28] तथा "निमिषा अपनी छूटी हुई पढ़ाई पूरी करके किसी कॉर्पोरेट ऑफिस में काम करने लगी।"[29] इसी प्रकार से मनीषा कैट की कोचिंग लेकर किसी अच्छे इंस्टीट्यूट से एम.बी.ए. करने के उपरांत जर्मनी में किसी कंपनी में नौकरी कर रही है। खेल जगत में भी महिला पात्रों की पहचान हुई है। जैसे उपन्यास 'गुनाह-बेगुनाह' में "जाहिदा तैराकी की चैंपियन है।"[30] तथा "एथलीट्स की सिरमौर लड़की शबनम का भी परिचय मिलता है।"[31] वस्तुतः निष्कर्ष के रूप में ये कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में महिलाएँ अब रिश्तों व संबंधों की पहचान से बहुत दूर निकलती हुई अपने संघर्ष व श्रम के बल पर घर-बार व समाज में अपने कार्यकारी रूप की अभिव्यक्ति व पहचान दर्ज कराने में सफल हुई हैं। आज कोई भी कार्य क्षेत्र अथवा कौशल महिलाओं की पकड़ से बाकी नहीं रह गया। महिलाएँ अब हर उन क्षेत्रों व कार्यों को फतह कर लिया है जो कभी पुरुष प्रधान अथवा पुरुषयोचित समझे जाते थे। महिलाओं की इसी परिवर्तित स्वरूप को उपन्यासकारों से उपन्यास के पात्रों में साकार कर उनके जीवन यात्रा की गाथा को बयान किया है। महिलाओं के संघर्ष व संकल्प को इक्कीसवीं सदी के उपन्यास की इन कामकाजी महिला पात्रों को व्यापक स्तर पर व्याख्यायित किया गया है जो सफलता की शिखर छू रही महिलाओं का ही साकार रूप हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, पुष्पपाल, 21वीं शती का हिन्दी उपन्यास, राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली,2016,पृ.43

2. भसीन कमला, भारतीय संदर्भ में नारी सशक्तिकरण, योजना, वर्ष60, अंक9, 2016,पृ.10

3. डिप्टी अहमद नजीर, मिरातुलउरूस,आर्काइव.ओ.आर.गी., पृ.81

4. पं शर्मा गौरीदत्त, देवरानी जिठानी की कहानी, हिंदी समय.कॉम

5. मुंशी प्रेमचंद, गोदान, पंचशील प्रकाशन, पृ.49

6. कुमार जैनेंद्र, सुखदा, पूर्वोदय प्रकाशन, पृ.62

7. यशपाल, झूठासच, लोकभारती प्रकाशन,पृ.38

8. कुमारी सरोज {सं}, कामकाजी महिला, अनन्य प्रकाशन, 2021, पृ.57

9. सौरभ प्रदीप, और सिर्फ तितली, 2015, वाणी प्रकाशन, पृ.27

10. वही, पृ.34

11. अनामिका, आईनासाज़, राजकमल प्रकाशन, 2020, पृ.10

12. शर्मा ब्रह्मदत्त, आधी दुनिया पूरा आसमान, शिवना प्रकाशन, 2024, पृ.151

13. पुष्पा मैत्रयी, विज़न, वाणी प्रकाशन, 2002, पृ.11

14. वही, पृ.53

15. वही, पृ.86

16. कटारे महेश, कालीधार, शिवना प्रकाशन, 2019, पृ.192

17. मुद्गल चित्रा, नकटौरा, सामयिक प्रकाशन, 2022, पृ.

18. शर्मा ब्रहमदत्त, आधी दुनिया पूरा असमान, शिवना प्रकाशन, 2024, पृ. 256

19. पुष्पा मैत्रयी, गुनाह बेगुनाह, राजकमल प्रकाशन, 2011, पृ.66

20. अग्निहोत्री कृष्णा, बित्ता भर की छोकरी, अमन प्रकाशन, 2014, पृ.281

21. मुद्गल चित्रा, नकटौरा, सामयिक प्रकाशन, 2022, पृ.281

22. अग्निहोत्री कृष्णा, बित्ता भर की छोकरी, अमन प्रकाशन, 2014, पृ.187

23. गुप्त रजनी, ये आम रास्ता नहीं, वाणी प्रकाशन, 2013, पृ.25

24. मुद्गल चित्रा, नकटौरा, सामयिक प्रकाशन, 2022, पृ.35

25. वही, पृ.52

26. अनामिका, आईनासाज़, राजकमल प्रकाशन, 2020, पृ.127

27. वही, पृ.211

28. सौरभ प्रदीप, मुन्नी मोबाइल, वाणी प्रकाशन, 2009, पृ.107

29. गुप्त रजनी, तिराहे पर तीन, राजपाल एण्ड सन्ज प्रकाशन, 2021, पृ. 135

30. पुष्पा मैत्रयी, गुनाह बेगुनाह, राजकमल प्रकाशन, 2011, पृ.126

31. वही, पृ.233